यौन-हिंसा और भारतीय राज्य

विसंगतियों के आईने में

पूजा बख़्शी

यह शोध-पत्र दिसम्बर, 2012 में दिल्ली में हुए क्रूर सामूहिक बलात्कार की घटना पर भारतीय राज्य की प्रतिक्रियाओं का परीक्षण करता है। यह आलेख उत्तर-औपनिवेशिक नारीवाद की इस समझ पर आधारित है कि राज्य एक सजातीय संस्था नहीं है। इसमें अपराध की जवाबदेही तय करने के लिए नियुक्त किये गये दो राजकीय निकायों—जस्टिस वर्मा कमेटी और जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन— के दृष्टिकोण और सिफ़ारिशों में अंतर्निहित भेदों की जाँच करने का प्रयास किया गया है।

परिचय

यौन-हिंसा के प्रति भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया महिला और राज्य के बीच के विरोधाभासी संबंधों में स्थापित करना ज़रूरी है। राज्य के पास एक पितृसत्तात्मक संस्थागत तंत्र है, जिसके कारण महिलाएँ पीड़ित होती हैं। दूसरी तरफ़, महिलाएँ लैंगिक संवेदनशीलता से सम्पन्न संस्थागत बदलाव लाने के लिए समर्थन गोलबंद करते हुए दबाव समूहों की रचना करती हैं।

यौन-हिंसा के प्रति भारतीय राज्य की प्रतिक्रियाओं में विसंगतियों को दर्शाने के लिए यह लेख 2012 में दिल्ली में घटित सामूहिक बलात्कार के मामले का अध्ययन करता है। यह अध्ययन इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इस घटना के बाद ही तत्कालीन संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार ने यौन-हिंसा के विरुद्ध आपराधिक क़ानूनों में कुछ प्रमुख संशोधन पारित किये। इस प्रकार यह घटना

ऊषा मेहरा कमीशन की रपट ने पितृसत्ता की व्यापकता और उसके कारण स्त्री के शरीर की गरिमा के प्रति उपजने वाले असम्मान जैसे मुद्दे को घटना के कारण के रूप में स्वीकार नहीं किया। इसके बदले रिपोर्ट इस बात पर ध्यान केंद्रित करती है कि कुछ चीज़ें होती/नहीं होती तो अपराध कैसे टाला जा सकता था। ... यह अपने आप में महिलाओं की अधीनस्थता के वास्तविक मुद्दे और पितृसत्ता में महिलाओं की अधीनता और उनकी शारीरिक भंगुरता पर बहुत कम प्रकाश डालती है।

महिलाओं के भारतीय राज्य के साथ पारस्परिक व्यवहारों के इतिहास में एक मील का पत्थर साबित हुई। यह लेख जस्टिस वर्मा कमेटी और जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन द्वारा प्रस्तुत दो रपटों पर केंद्रित है।

इस लेख के केंद्रीय तर्क की दो परतें हैं। 2012 में घटित सामूहिक बलात्कार के प्रति भारतीय राज्य की प्रतिक्रिया की प्रकृति एक जैसी नहीं थी। इस भिन्नता को इन राजकीय निकायों द्वारा इस मामले को समझने में अपनाए गये दृष्टिकोणों के बीच मतभेदों में स्थित करने की आवश्यकता है। ऐसा लगता है कि जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन पुलिस एवं अन्य एजेंसियों के साथ जुड़ाव तथा उन्हें किसी भी महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन से बचाने के राजकीय एजेंडे से बँधा हुआ था। दूसरी तरफ़ जस्टिस वर्मा कमेटी के ज़रिये यौन-हिंसा के संबंध में कुछ प्रगतिशील हस्तक्षेप होते हुए दिखाई पड़े हैं जिनमें लैंगिक संवेदनशीलता दिखती है। वर्मा कमेटी ने भारत में नारीवादियों की उपस्थिति और यौन-हिंसा के पहलुओं पर उनके शोध से अपना राबिता क़ायम किया है।

वर्मा कमेटी और मेहरा कमीशन की रपटों के तुलनात्मक विश्लेषण से पहले इस पर्चे में यौन-हिंसा के प्रति भारत राज्य की प्रतिक्रिया की एक सैद्धांतिक रूपरेखा तैयार करने की कोशिश की है, जिसका आधार उत्तर-औपनिवेशिक नारीवादी दृष्टि है।

उत्तर-औपनिवेशिक नारीवादी दृष्टिकोण के प्रमुख पहलू

उत्तर-औपनिवेशिक नारीवादी दृष्टिकोण तीन कारणों से अनुभवजन्य वास्तविकताओं के सूक्ष्म विश्लेषण के लिए एक बेहतर सैद्धांतिक खाँचा प्रदान करता है। पहला कारण है, पश्चिमी नारीवादियों के काम में प्रचलित सार्वभौम प्रवृत्तियों से इतर एवं तार्किक अनुमान के रूप में, वैश्विक दक्षिण (ग्लोबल साउथ) में महिलाओं के विभिन्न सांस्कृतिक और राष्ट्रीय संदर्भों की विशिष्टताओं को पहचानते हुए नारीवादी सिद्धांत को वैश्विक स्वरूप देने की प्रतिबद्धता।[1] उनका नज़रिया वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक उपकरणों का प्रयोग करता हुआ संघर्ष और मुक्ति के कथ्य में व्याप्त रैखिकता पर सवाल उठाता है, एवं इसे बहुलतावादी स्वरूप देने की दिशा में पश्चिम से इतर नारीवादी संघर्ष एवं मुक्ति के कथ्य के लिए स्थान तलाशता है।[2] दूसरा कारण उनका यह तर्क है कि राज्य एक सजातीय निकाय नहीं है, बल्कि एक विजातीय निकाय है, जहाँ यौन-हिंसा के मामले में राज्य की विभिन्न एजेंसियाँ एक ही घटना की प्रतिक्रिया अलग-

[1] सारा मिल्स (2011) : 98-99.

[2] बनर्जी, चटर्जी एवं चौधरी (2012) : 8.

अलग तरीक़े से करती हैं। तीसरा, यहाँ रेखांकित करने की ज़रूरत है कि औपनिवेशिक एवं उत्तर-औपनिवेशिक संदर्भ में 'क़ानून' ने एक ऐसे आलोचनात्मक स्थल की रचना की है जहाँ संघर्ष के ज़रिये पदसोपानीय लैंगिक संबंधों को बदलने की कोशिश की जा सकती है।[3]

भारत में क़ानूनी विमर्श पितृसत्ताओं के एकीकरण और उनको मिलने वाली चुनौतियों के मामले में एक प्रतिस्पर्धी क्षेत्र तैयार करता है। यहाँ पर हमें विशेष रूप से महिलाओं के प्रति भारतीय राज्य के मौलिक विरोधाभास एवं विषम कार्यप्रणाली को समझना होगा। उदाहरण के लिए, राजेश्वरी सुंदर राजन संकेत करती हैं कि एक ओर, संवैधानिक रूप से महिलाओं को अधिकार प्रदान किये गये हैं और राज्य कई अवसरों पर इसे सुनिश्चित करने के लिए उपाय करता है लेकिन दूसरी तरफ़, महिलाएँ हिंसा का सामना करती हैं और कई प्रकार की पदसोपानिकता के अधीन रहती हैं।

वैधानिकता पर एक व्यापक बातचीत आवश्यक है जो कि अलग अलग तरह से हो और एक-दूसरे से जुड़ी भी हो। चूँकि वैधानिकता की भाषा का इस्तेमाल महिलाओं और ग़ैर-विषममानक यौनिकताओं (सेक्सुअलिटीओं) से भेदभाव को बनाए रखने एवं उनको अधीन बनाए रखने के लिए होता रहा है। अत: यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि ऐसे भेदभाव की अनुमति देने वाले क़ानूनों को रद्द करने एवं उन पर पुनर्विचार के लिए निरंतर दबाव बनाया जाए। यदि क़ानून के माध्यम से भेदभाव और दमन जारी रखा गया है, तो परिवर्तन केवल क़ानून के बदलाव से ही सम्भव होगा। उदाहरणस्वरूप, राज्य के विभिन्न अंगों द्वारा संघर्ष क्षेत्र (कनफ़्लिक्ट जोन) में किये जा रहे रोजमर्रा की यौनिक यातनाओं के संदर्भ में सशस्त्र बल विशेषाधिकार अधिनियम (अफस्पा) जैसे क़ानून लोगों को यौनिक यातनाओं के चुनौती देने वाले अधिकारों को रोकने का काम करती है। अफस्पा दण्ड की ऐसी संस्कृति रचती है जिसके तहत लोग यौन शोषण के विरुद्ध आवाज न उठा सकें। ऐसे परिदृश्य में, इस तरह के क़ानूनों को रद्द करने के लिए बहस करना महत्त्वपूर्ण है। इसी तरह, उत्पीड़न, ताक-झाँक, पीछा करना, सामूहिक बलात्कार, एसिड हमले जैसे विभिन्न प्रकार के यौन हमलों को क़ानून के शासन में अवैध बताकर दण्डनीय बनाया जा सकता है।

जस्टिस वर्मा की रपट स्पष्ट रूप से भारत में नारीवादियों द्वारा किये गये कार्यों के साथ-साथ विदेशों में नारीवादियों के किये गये काम से जुड़ी हुई है। रिपोर्ट में विभिन्न नारीवादी विद्वानों, महिला संगठनों, बाल अधिकार संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, दूसरे देशों की कार्य प्रद्धति, आदि, क़ानूनी बिरादरी के सदस्य, ग़ैर-सरकारी संगठन, अनुसंधान समूह, चिकित्सा बिरादरी के सदस्य, क़ानूनी दिग्गजों और पुलिस द्वारा किये गये कार्यों को विधिवत् स्वीकार किया है। इस रपट ने अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का संदर्भ देते हुआ यह दोहराया है कि भारत का दायित्व है कि वह इन सम्मेलनों के प्रावधानों का घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पालन करे और महिलाओं के अधिकारों को वास्तविक रूप प्रदान करे।

भारत जैसे उत्तर-औपनिवेशिक राष्ट्र-राज्य में, औपनिवेशिकवाद के ख़िलाफ़ वैधानिकता वास्तव में एक लम्बे समय से 'हमारी' लड़ाई का स्थायी

[3] रत्ना कपूर (2005) : 1-12.

हिस्सा रहा है और राष्ट्र-राज्य के लिए क़ानूनी फ्रेम तैयार करता है और साथ ही नागरिकता के मानकों को परिभाषित करता है। इस अर्थ में, क़ानून सामाजिक परिवर्तन और लोकतांत्रिक मानदण्डों को आगे बढ़ाने के लिए एक स्थल बन जाता है। क़ानून एक माध्यम भी बन गया है जिसके ज़रिये भेदभाव और दुर्व्यवहार को चुनौती दी जाती है, और कुछ मामलों में अवैध भी बना देता है। पितृसत्तात्मक मानदण्डों को चुनौती देने के लिए क़ानूनी विमर्श का इस्तेमाल कर महिलाओं के आंदोलनों ने राज्य के साथ अपनी भागीदारी में सीमित जीत हासिल की है। इनमें से कुछ हैं; दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से महिलाओं की सुरक्षा के लिए 1997 में विशाखा निर्णय में दिये गये दिशानिर्देश, घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005, हाल ही में आपराधिक क़ानून (संशोधन) अधिनियम 2013 में बलात्कार विरोधी क़ानूनों में हुए बदलाव, महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न अधिनियम 2013।[4]

यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि वैधानिकता के साथ संलग्नता की अपनी दुविधाएँ हैं, क्योंकि वैधानीकरण और वैद्यता की प्रक्रिया को परिभाषित करने की आवश्यकता है, जिसके अनुसार यौन-हिंसा के रूप में क्या गिना जाएगा, पर्याप्त सज़ा क्या होगी, स्वीकार्यता के लिए क्या होगा और क्या नहीं होगा। इसी तरह, क़ानूनी शर्तों में सुरक्षा को परिभाषित करने की प्रक्रिया में महिलाओं के अधिकारों और स्वतंत्रता में विस्तार हो सकता है या नहीं। इसके विपरीत, यह महिलाओं की शारीरिक गतिशीलता को नियंत्रित करने, उनके यौन व्यवहार और ड्रेस कोड निर्धारित करने की राज्य की क्षमता का विस्तार कर सकता है। अस्पष्टता एक दुधारी तलवार है। एक तरफ़ यह ख़ुद की विषम अभिव्यक्ति के लिए जगह छोड़ देती है, जबकि दूसरी तरफ़ हमेशा एक डर होता है कि 'वह' जो 'परिभाषा' के दायरे में नहीं आता है, उसे क़ानून की सुरक्षा भी नहीं मिलेगी।[5]

क़ानून, उत्तर-औपनिवेशिक राज्य और प्रगतिशील परिवर्तन के बीच संबंधों के इस प्रतिस्पर्धी क्षेत्र को स्वीकार करते हुए; इसे स्वीकार करने की आवश्यकता है कि वर्मा कमेटी और मेहरा कमीशन की रिपोर्ट क़ानूनी स्थिति में परिवर्तन लाने की दिशा में भारतीय राज्य द्वारा किये गये पूर्ववर्ती प्रयासों का गठन करती हैं। निम्नलिखित खण्ड में, यह आलेख इन दो रिपोर्टों के बीच भेद को उजागर करने का प्रयास करता है क्योंकि राज्य में मौजूद आवेगों में मतभेदों का प्रतीक है। आवेगों का एक सेट प्रगतिशील परिवर्तन के लिए सम्भावनाओं को व्यक्त करता है जबकि आवेगों के दूसरे सेट उन सम्भावनाओं को प्रतिबंधित करते हैं।

यौन-हिंसा पर राज्य निकायों की सिफ़ारिशों में विसंगतियों का अवलोकन

अपराध की पृष्ठभूमि

वर्मा कमीशन और मेहरा कमीशन के काम का विश्लेषण करने से पहले, संक्षेप में उस संदर्भ को जानना महत्त्वपूर्ण है जिसमें उनका गठन हुआ था। 16 दिसम्बर, 2012 को दिल्ली की सड़क पर चलती बस में पैरामेडिकल की एक छात्रा का क्रूर सामूहिक बलात्कार हुआ था। अगले कुछ महीनों के दौरान इस मामले को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मीडिया में व्यापक रूप से रिपोर्ट किया गया था। गुजरात, इलाहाबाद, उड़ीसा, चण्डीगढ़, रांची, लखनऊ, कोलकाता, कोच्चि, शिमला, सूरत, मुम्बई और लुधियाना सहित भारत के विभिन्न हिस्सों में, महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा की निंदा और पीड़िता के लिए न्याय की माँग को लेकर सार्वजनिक विरोध प्रदर्शन हुए थे।[6] अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी भारतीय

---

[4] रोकथाम, निषेध और निवारण.

[5] निवेदिता मेनन (2004).

[6] देखें, *द टाइम्स ऑफ़ इंडिया,* 20 दिसम्बर, 2012 तथा 22 दिसम्बर, 2012.

प्रवासियों ने सामूहिक बलात्कार पीड़िता के लिए न्याय की माँग करते हुए वाशिंगटन डी.सी., लंदन, सिडनी और मेलबर्न जैसे शहरों में सार्वजनिक विरोध प्रदर्शन किये।[7]

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस तरह के बढ़ते सार्वजनिक विरोध प्रदर्शनों के कारण भारत सरकार को देश में महिलाओं पर हो रहे यौन उत्पीड़न की समस्याओं पर ग़ौर करने पर विवश किया। केंद्र सरकार ने तत्परता दिखाते हुए 22 दिसम्बर 2012 को जस्टिस वर्मा कमेटी की नियुक्ति की। इस कमेटी को नियुक्त करने का उद्देश्य, महिलाओं पर हो रहे यौन उत्पीड़न के संदर्भ में क़ानून में बदलाव की सिफ़ारिश और अपराधियों के लिए स्पीडी ट्रायल और अधिक से अधिक सज़ा सुनिश्चित करना था। वर्मा कमीशन ने 23 जनवरी, 2013 को अपनी रिपोर्ट सौंपी। सरकार ने दिसम्बर 2012 के सामूहिक बलात्कार के मामले की विशेष रूप से जाँच के लिए, पुलिस और अन्य सरकारी अधिकारियों द्वारा हुई चूक की पहचान और महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के उपायों की सिफ़ारिश करने के लिए 26 दिसम्बर, 2012 को जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन को नियुक्त किया। इस कमीशन ने 22 फ़रवरी, 2013 को अपनी रिपोर्ट जमा की।

जिस तरह से इन दोनों राज्य निकायों ने यौन–हिंसा की इस घटना पर अपनी प्रतिक्रिया दी उनमें अंतर को ठीक वहीं से समझा जा सकता है जहाँ दोनों नें इस विशेष अपराध और इसके कारण को समझने की कोशिश की है। वर्मा कमीशन रिपोर्ट ने स्वीकार किया कि महिलाओं को पितृसत्तात्मक संदर्भ में उनकी शारीरिक पवित्रता के अनादर के कारण यौन–हिंसा का सामना करना पड़ता है, जहाँ उन्हें अधिकार सम्पन्न व्यक्ति की बजाय समुदाय/धर्म/परिवार/राष्ट्रीय सम्मान के प्रतीकों के रूप में अधिक देखा जाता है। इसमें कहा गया कि सामूहिक बलात्कार एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी। इसने पुलिस, ट्रैफ़िक पुलिस की भूमिका में चूक और तमाशा देख रहे लोगों की अरुचि को उजागर किया। इसमें कहा गया कि संकट की स्थिति में पुलिस को अत्यंत तात्कालिकता के साथ शिकायत पर कार्रवाई करनी चाहिए थी और पीड़िता को तुरंत चिकित्सकीय सहायता प्रदान की जानी चाहिए थी। साथ ही, दिल्ली में सामूहिक बलात्कार का विरोध कर रहे लोगों पर पुलिस द्वारा की गयी लाठीचार्ज की निंदा की गयी।[8]

दूसरी तरफ़, मेहरा कमीशन रिपोर्ट परेशान करने वाले सवाल उठाती है। क़ानून और व्यवस्था के उचित कार्यान्वयन की कमियों, जिसने 16 दिसम्बर, 2012 को दिल्ली में हुए सामूहिक बलात्कार की घटना के उत्प्रेरक रूप में काम किया, को समझने की बजाय यह रिपोर्ट 'क्या होता यदि' परिदृश्य से जुड़ी स्थितियों की पूरी शृंखला के लिए समर्पित है जिनसे सम्भवत: पीड़ित और उसके दोस्त को बचाया जा सकता था। जेयूएससी रिपोर्ट ने पितृसत्तात्मकता की व्यापकता और उसके कारण स्त्री के शरीर की गरिमा के प्रति उपजने वाले असम्मान जैसे मुद्दे को घटना के कारण के रूप में स्वीकार नहीं किया। इसके बदले रिपोर्ट इस बात पर ध्यान केंद्रित करती है कि कुछ चीज़ें होती / नहीं होती तो अपराध कैसे टाला जा सकता था। जैसे, अगर ऑटो रिक्शा चालक जिसने पीड़िता और उसके दोस्त को ले जाने से इनकार कर दिया था, अगर उसने उन्हें ले जाने से इंकार नहीं किया होता, तो वे दोनों सुरक्षित होते। अगर ट्रैफ़िक पुलिस ने देखा होता कि जिस वाहन में अपराध हुआ था, उसके पास उचित लाइसेंस नहीं था; अगर वाहन में काले रंग के शीशे नहीं होते; सम्भवत: अगर पीसीआर वैन अधिक सतर्क रहते; दिल्ली पुलिस पीड़ितों तक पहुँचने और उन्हें अस्पताल ले जाने में और तेज़ी दिखाती तो पीड़िता की जान बचाई जा सकती थी आदि आदि।[9] यह अपने आप में महिलाओं की

---

[7] अंतर्राष्ट्रीय विरोधों पर समाचार पत्रों की रिपोर्ट के लिए देखें— *द इंडियन एक्सप्रेस,* 31 दिसम्बर, 2012. नयी दिल्ली : *द इंडियन एक्सप्रेस.* ऑनलाइन उपलब्ध– http://epaper.indianexpress.com/78925/Indian-Express/31-December-2012ŒÌpage/4/2. 6 अगस्त, 2016 को देखा गया था.

[8] जस्टिस वर्मा कमेटी रिपोर्ट (2013) : 1–19.

[9] जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन जाँच रिपोर्ट (2013) : 5–58.

अधीनस्थता के वास्तविक मुद्दे और पितृसत्ता में महिलाओं की अधीनता और उनकी शारीरिक भंगुरता पर बहुत कम प्रकाश डालती है। फिर भी, कमीशन ने यह भी बताया कि दक्षिण दिल्ली पुलिस की पूरी टीम ने इस मामले को हल करने, सबूतों को उजागर करने और आरोपियों पर सफलतापूर्वक मुक़दमा चलाने के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास किया है।

दोनों रिपोर्टों में साझा लेकिन चिंताजनक विशेष बात यह थी कि दोनों ही ने सामूहिक बलात्कार पीड़िता को संदर्भित करने के लिए 'निर्भया' शब्द का उपयोग किया था। ऐसा इसलिए कि पीड़िता के निडर होने की धारणा को थोपा जा सके, लेकिन आशय कमोबेश यह भी था कि पीड़िता को बहादुर और निडर होना चाहिए था। यह भी माना जाता है कि पीड़िता केवल तभी हमारी चिंता के योग्य थी जब वह बहादुर थी। यह भय, दर्द, आघात, अपमान और दुःख के वास्तविक अनुभव से दूर ले जाता है जो शायद उससे लड़ने या उसकी निहित साहस से लड़ने की इच्छा से कहीं ज़्यादा प्रभावित होता। यह सब सर्वव्यापी शब्द 'निर्भया' में शामिल हो जाता है। यह शब्द लोगों के चारों ओर गूँजने और उसकी छवि जीवित व्यक्ति के रूप में बनाने के लिए उपयोगी हो सकता था फिर भी इसमें पूरी तरह से उसके (पीड़िता के) अनुभव की गहराई से नहीं समझा जा सका था।

प्रविधि

दोनों राज्य निकायों ने जो प्रविधि अपनाई वह इस बात में भी अलग थीं कि वे किन लोगों तक बात करने के लिए गये, वे किन्हें सुन रहे थे, किस हद तक उन्होंने रिपोर्ट लिखने में इन सुनवाइयों को गम्भीरता से उपयोग किया था। वर्मा कमीशन द्वारा उपयोग की जाने वाली प्रविधि को रिपोर्ट में सावधानीपूर्वक समझाया गया है और संस्थानों और लोगों के नाम जिन्होंने समिति को जानकारी दी, विचार व्यक्त किये उनको उचित श्रेय भी दिया गया है। वर्मा कमीशन रपट स्पष्ट रूप से भारत में नारीवादियों द्वारा किये गये कार्यों के साथ-साथ विदेशों में नारीवादियों के किये गये काम से जुड़ी हुई है। रिपोर्ट में विभिन्न नारीवादी विद्वानों, महिला संगठनों, बाल अधिकार संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, दूसरे देशों की कार्य प्रद्धति, आदि, क़ानूनी बिरादरी के सदस्य, ग़ैर-सरकारी संगठन, अनुसंधान समूह, चिकित्सा बिरादरी के सदस्य, क़ानूनी दिग्गजों और पुलिस द्वारा किये गये कार्यों को विधिवत् स्वीकार किया है।[10] वर्मा कमीशन ने अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का संदर्भ देते हुआ यह दोहराया है कि भारत का दायित्व है कि वह इन सम्मेलनों के प्रावधानों का घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पालन करे और महिलाओं के अधिकारों को वास्तविक रूप प्रदान करे। वर्मा कमीशन रिपोर्ट दुनिया के विभिन्न हिस्सों में दूसरे देशों की कार्यप्रणालियों के उन उदाहरणों का भी उल्लेख करती है जो भारतीय संदर्भ में प्रासंगिक हो सकती हैं।[11]

इसके साथ ही, वर्मा कमीशन ने उस समय हुए सार्वजनिक विरोध प्रदर्शनों के दौरान व्यक्त चिंताओं को भी गम्भीरता से लिया।[12] प्रतीक्षा बख़्शी ने तर्क दिया कि कमेटी ने प्रदर्शनकारियों को एक घोषणापत्र प्रदान किया था। उन्होंने दोहराया कि कमेटी के सदस्यों में से एक श्री गोपाल सुब्रमण्यम ने तर्क दिया था कि प्रदर्शनकारियों ने सिर्फ़ सामूहिक बलात्कार के ख़िलाफ़ विरोध नहीं किया था,

[10] कमेटी को विभिन्न हितधारकों से 70,000 से अधिक प्रतिक्रियाएँ / सिफ़ारिशें मिलीं. अधिक जानकारी के लिए देखें— जस्टिस वर्मा (रिटायर्ड) और अन्य. (2013), कार्य पद्धति व आपराधिक क़ानून पर जस्टिस वर्मा (रिटायर्ड) और अन्य. (2013) कमेटी की रिपोर्ट. नयी दिल्ली : भारतीय राज्य : 20-23.

[11] इन अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (1948), नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (1966), आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (1966), महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा के उन्मूलन पर घोषणा, (1993) (डीईवीडब्ल्यू), महिलाओं के ख़िलाफ़ भेदभाव के सभी रूपों को ख़त्म करने से सम्बद्ध सम्मेलन (सीईडीएडब्ल्यू) शामिल थे, अधिक जानकारी के लिए देखें— जस्टिस वर्मा (रिटायर्ड) और अन्य (2013), अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के तहत लिंग न्याय और भारत के दायित्व. आपराधिक क़ानून पर जस्टिस वर्मा (रिटायर्ड) और अन्य. (2013) कमेटी की रिपोर्ट, नयी दिल्ली : भारतीय राज्य : 57-69.

[12] प्रतीक्षा बख़्शी (2016) : 80-88.

लेकिन वे किसी तरह के निवारण की तलाश में थे।[13] बख़्शी बताती हैं कि वर्मा कमीशन द्वारा अपने काम और इसकी सिफ़ारिशों को तैयार करने के लिए उपयोग किये जाने वाले तरीक़े पिछले क़ानून आयोगों द्वारा उपयोग की गयी तरीक़ों से अलग थीं।

दूसरी तरफ़ लगता है कि मेहरा कमीशन राज्य के एजेंडा का पालन कर रही थी जो अपराध की घटना को जघन्य बताते हुए अपनी सिफ़ारिशों को इस तरह पेश करता है जिनमें राज्य की आलोचना नहीं हो। मेहरा कमीशन की रिपोर्ट में सार्वजनिक संस्थानों के नाम भी सूचीबद्ध किये गये थे, जिनमें दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा बढ़ाने के संबंध में सिफ़ारिशों की माँग की गयी थी। कमीशन ने दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए किये जा सकने वाले उपायों के बारे में लोगों की प्रतिक्रियाओं को जानने के लिए एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया था। इसे दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षकों और छात्रों, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, चेन्नई, कोलकाता, मुम्बई के छात्रों और पेशेवरों, अखिल भारतीय महिला सम्मेलन, महिला समूहों और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों से प्रतिक्रिया मिली।[14] हालाँकि, वर्मा कमीशन के विपरीत, यह सूची अपेक्षाकृत छोटी थी, और यह स्पष्ट नहीं था कि सार्वजनिक संस्थानों या व्यक्तियों द्वारा दिये गये सभी सुझावों ने कमीशन के काम पर असर डाला था या इसके प्रमुख निष्कर्षों और सिफ़ारिशों को इन सुझावों के अनुरूप तैयार किया गया था।

वर्मा कमीशन की तरह, मेहरा कमीशन ने यह भी उल्लेख किया कि भारत सीईडीएडब्ल्यू, पेइचिंग घोषणा आदि जैसी महिलाओं के संबंध में हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में हस्ताक्षर करने वाला राष्ट्र है।[15] हालाँकि, ऐसा लगता है कि मेहरा कमीशन ने इन कुछ सम्मेलनों का केवल संदर्भ के तौर पर इसलिए उल्लेख किया है कि महिलाओं के मुद्दों पर हुई उन प्रगतियों को रेखांकित किया जा सके जिस पर अमल भारत को भी करना था।

नॉर्मेटिव फ़ाउंडेशन— वर्मा कमीशन में इसकी उपस्थिति और मेहरा कमीशन रिपोर्ट में इसकी अनुपस्थिति

पर्चे का यह हिस्सा दोनों राज्य निकायों द्वारा दिये गये ऐसे तर्क और दलीलों से जुड़ा हुआ है जो यह कहती हैं कि यौन-हिंसा का जवाब देने की आवश्यकता है। वर्मा कमीशन रिपोर्ट ने एक मानक तर्क देकर शुरू किया कि भारत एक संवैधानिक लोकतंत्र है और महिलाओं के अधिकार संविधान में ही शामिल हैं। क़ानून के तहत महिलाएँ समानता और समान सुरक्षा की हक़दार हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के संबंध में, किसी भी रूप में महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा गरिमा के साथ जीने के मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता है। यह सुनिश्चित करने की ज़िम्मेदारी राज्य की है जो इन अधिकारों को यथार्थनीय बनाए रखे।[16] इसने वर्मा कमीशन के लिए यह सम्भव बनाया कि वह राज्य, राज्य के व्यवहारों के साथ-साथ सामाजिक व्यवहारों की जाँच आलोचनात्मक रूप से कर सके जो महिलाओं के अधिकार में बाधा बन रहे थे। वर्मा कमीशन ने समाज और राज्य का आलोचनात्मक परीक्षण करते समय 'महिलाओं' और उनके दृष्टिकोण और अनुभवों को प्राथमिकता दी।

बख़्शी भी क़ानून में सुधार के लिए सिफ़ारिशें तय करने की विचार-विमर्श प्रक्रिया में समाजशास्त्रियों और नारीवादी विद्वानों को भागीदारी के लिए आमंत्रित करने के वर्मा कमीशन के

---

[13] गोपाल सुब्रमण्यम ने तर्क दिया कि लोगों के साक्षात्कार में वर्मा कमीशन के अनुभव से यह स्पष्ट हो गया था कि लोगों और राज्य के बीच एक एक गहरी संवादहीनता थी. उन्होंने सुझाव दिया कि अगर राज्य लोगों के प्रति जवाबदेही की दिशा में सुधारात्मक उपाय नहीं करता तो इससे आगे चलकर सामाजिक अशांति बढ़ सकती है. लोग राज्य को एक परवाह करने वाला राज्य बनाने की माँग कर रहे थे. अधिक जानकारी के लिए देखें, निहारिका मंधाना (2012).

[14] जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन जाँच रिपोर्ट (2013) : 2.

[15] वही : 2.

[16] जस्टिस वर्मा कमेटी रिपोर्ट (2013) : 24-56.

फ़ैसले को अहम बताती हैं। इस प्रकार नारीवादी शोध और हस्तक्षेप, विधिवत् स्वीकृत और कुछ हद तक क़ानून सुधार की प्रक्रिया में शामिल किये गये थे। हालाँकि राज्य के हिस्से में इसकी व्याख्या चालाकी के रूप में की जा सकती है, लेकिन इसे नारीवादी चिंताओं को मान्यता देने के रूप में भी स्वीकार किया जाना चाहिए। प्रभा कोटीश्वरन (2016) पुष्टि करती हैं कि इस कमेटी की रिपोर्ट लगभग सौ नारीवादी ग़ैर-सरकारी संगठनों और व्यक्तियों के साथ बातचीत से प्रभावित हुई जिन्होंने कमेटी को लिखा और जनवरी 2013 के दौरान इसके सदस्यों से मुलाकात की।[17] कुछ लोगों का मानना था कि उन्होंने वर्मा कमीशन को संगीन बलात्कार के मामलों में मौत की सज़ा की सिफ़ारिश नहीं देने के लिए राज़ी किया था। यह भी ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि कमेटी के सदस्यों के पास महिलाओं के प्रति अपराध का रिकॉर्ड था। समिति के सदस्यों में जस्टिस वर्मा ने यौन उत्पीड़न पर ऐतिहासिक विशाखा निर्णय दिया था। जस्टिस लीला सेठ भारत के 172वें क़ानून आयोग की सदस्य रही थीं जिसने महिलाओं के हितों की रक्षा के क़ानून में कई सुधारों की सिफ़ारिश की थी और श्री गोपाल सुब्रमण्यम ने बार डांसरों की आजीविका के अधिकार को लेकर मुम्बई उच्च न्यायालय के निर्णय के ख़िलाफ़ की गयी अपील में लड़ाई में हिस्सा लिया था।

इसके विपरीत, मेहरा कमीशन रिपोर्ट द्वारा दिये गये तर्कों को महिलाओं की सुरक्षा और राज्य के व्यवहारों के बारे में उनके बड़े तर्कों के आधार के रूप में किसी भी मानक ढाँचे की अनुपस्थिति के आधार पर चिह्नित किया गया था। मेहरा कमीशन रिपोर्ट को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आयोग का नज़रिया राज्य और सरकार के निकायों की आलोचनात्मक पड़ताल करने की ज़रूरत से संचालित नहीं था। यद्यपि यौन-हिंसा को सम्बोधित करने और महिलाओं के अधिकारों के आगे बढ़ाने की आवश्यकता का रिपोर्ट में उल्लेख है।

मेहरा कमीशन का तर्क है कि 'महिलाओं की उनके अधिकारों के लिए लड़ाई 'पुरुषों के ख़िलाफ़' लड़ाई नहीं है। यह अन्यायपूर्ण परम्पराओं और मर्द द्वारा बनाई गयी लक्ष्मण रेखा जिसे महिलाओं को पार नहीं करना चाहिए, के ख़िलाफ़ एक लड़ाई है'।[18] आयोग ने यह भी तर्क दिया कि लैंगिक संवेदनशीलता और लैंगिक समानता से न केवल एक सुरक्षित समाज बनेगा बल्कि आर्थिक दक्षता में भी वृद्धि होगी। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट का हवाला देते हुए, यह संकेत किया गया कि अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी से देश की सम्पत्ति को बढ़ाने में मदद मिलेगी। यह विशुद्ध यांत्रिक समझदारी की तरह है कि महिलाओं के अधिकारों की रक्षा क्यों की जानी चाहिए और उनकी शारीरिक सुरक्षा क्यों आवश्यक है और इसका शरीरिक गरिमा के साथ रिश्ता नहीं के बराबर है।

राज्य के विभिन्न पक्षों पर विमर्श

यहाँ यह दोहराना महत्त्वपूर्ण है कि यौन-हिंसा की पीड़ित महिलाओं को बहुत-सी जगहों और राज्य के बहुत से कर्ताओं से जूझना है। वर्मा कमीशन ने विभिन्न संघर्षों को संज्ञान में लिया और इनका आलोचनात्मक परीक्षण किया। ऐसे सभी मामले जहाँ यौन-हिंसा की पीड़िता को राज्य के साथ जूझना है उन मामलों की गम्भीरता से जाँच की सिफ़ारिश की। यह रिपोर्ट यौन अपराधों से निपटने में पुलिस की भूमिका पर भी प्रश्नचिह्न लगाता है।[19] इस रिपोर्ट का तर्क है कि यौन-हिंसा को प्रभावी ढंग से रोकने एवं इससे निपटने के लिए पुलिस तंत्र के सुधार की भी आवश्यकता है। जैसे कि बलात्कार और हमले के मामलों में एफ़आईआर दर्ज करना पुलिस के लिए अनिवार्य किया जाए, पीड़िता को

[17] प्रभा कोटीश्वरन (2016).

[18] जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन (2013) : 128.

[19] जस्टिस वर्मा कमेटी रिपोर्ट (2013) : 312-339.

ऐसे समय में आवश्यक परामर्श देने की व्यवस्था की जाए। वर्मा कमीशन ने यह भी सिफ़ारिश की थी कि पुलिस की दक्षता बढ़ाने पर लगातार काम करने के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा आयोग की स्थापना की जानी चाहिए। इसमें दोहराया गया है कि सार्वजनिक स्थानों पर बच्चों और महिलाओं को यौन उत्पीड़न से बचाना पुलिस का कर्तव्य था। पुलिस अधिकारियों को इस कर्तव्य के प्रति अधिक संवेदनशील बनने के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता थी। प्रभावी पुलिसिंग सुनिश्चित करने के लिए सभी पुलिस स्टेशनों में सीसीटीवी कैमरे लगवाना और पॉवर के दुरुपयोग के ख़िलाफ़ सुरक्षा सुनिश्चित करना और आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करना और महिलाओं को समर्थन और सक्षम बनाना जिससे वो यौन उत्पीड़न के मामले रिपोर्ट करा सकें। इनमें पुरुषों और महिलाओं के लिए अलग-अलग बाथरूम और लॉक अप, आगंतुकों के लिए अलग वेटिंग रूम और इस तरह के सुविधाएँ शामिल होंगे। पुलिस के कामकाज की जाँच के लिए बनी प्रक्रिया पर फिर से काम करने की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए कमेटी ने सुझाव दिया कि लोगों की संतुष्टि, महिलाओं और अन्य कमज़ोर समूहों के लिए बढ़ती सुरक्षा की धारणाओं को ध्यान में रखा जाए। साथ ही पुलिस कल्याण ब्यूरो की भी स्थापना की जाए जिसमें सेवानिवृत्ति के बाद पुलिस के लिए स्वास्थ्य देखभाल, वित्तीय सुरक्षा, पुलिस अधिकारियों के लाभ और उनके आश्रितों के लिए कल्याण कार्यक्रमों का कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जाए। सामुदायिक पुलिसिंग के लिए एक पहल भी शुरू की जा सकती है। इसने मानव तस्करी के रैकेट में पुलिस की कथित भागीदारी और सीबीआई द्वारा उठाए गये क़दमों जैसे कि तस्कर रोधी इकाई की स्थापना, दिल्ली पुलिस की लापता बच्चों के देशव्यापी विवरण वाली वेबसाइट स्थापित करने की पहल पर प्रकाश डाला गया है जिसे आगे और मजबूत बनाना चाहिए। नाबालिगों, परेशान महिलाओं और बच्चों के लिए बने राज्य आश्रय घरों को उच्च न्यायालयों के क़ानूनी देखरेख के तहत लाया जाए जिससे इन जगहों पर तस्करी न हो इसे सुनिश्चित किया जा सके।

यौन हमले की पीड़िता से मेडिकल बिरादरी के बर्ताव के संदर्भ में, वर्मा कमीशन ने बलात्कार पीड़ितों के योनि के आकार और हाइमेन की स्थिति का पता लगाने वाले दो उँगली परीक्षण को ख़त्म करने की सिफ़ारिश की।[20] यह तर्क दिया गया कि यह परीक्षण न केवल अनिश्चित, अमानवीय है

[20] वही : 272–331.

बल्कि अपमानजनक भी है। यह भी कहा गया कि बलात्कार पीड़िता के पिछले यौन इतिहास का बलात्कार के परीक्षण से कोई मतलब नहीं था। हालाँकि पीड़िता की सुरक्षा के लिए पीड़िता की गवाही और उससे सवाल जवाब को कैमरे में रिकॉर्ड किया जा सकता है, अनिवार्य कारणों की अनुपस्थिति में शेष मुक़दमा खुले अदालत में आयोजित किया जाए जिससे महिला संगठनों और नागरिक समाज के सदस्य इसे देख सकें। यह भी ज़ोर दिया गया कि ऐसे मामलों की सुनवाई करने वाले न्यायाधीशों का संवेदनशील होना महत्त्वपूर्ण है। पीड़िता के लिए कोर्ट रूम का माहौल प्रतिकूल नहीं होना चाहिए था।

वर्मा कमीशन ने सुझाव दिया था कि यौन उत्पीड़न के रिकॉर्ड वाले राजनीतिक उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने की अनुमति नहीं दी जाए और उन्हें राजनीतिक कार्यालय से हटा दिया जाए। इसे लेकर वर्मा कमीशन ने निर्वाचन आयोग से सिफ़ारिश की कि वह उम्मीदवारों के ख़िलाफ़ यौन उत्पीड़न के मामलों (यदि कोई हो) के विवरण का उल्लेख करना अनिवार्य करे और संसद इस मामले को देखे।[21]

वर्मा कमीशन द्वारा कई विशिष्ट सिफ़ारिशें की गयीं, जिसमें क़ानून[22] के विभिन्न धाराओं में प्रस्तावित परिवर्तन और पुलिस सुधार, न्यायिक सुधार, चुनाव सुधार, बलात्कार पीड़ितों की चिकित्सा जाँच में अनुशंसित परिवर्तन और यौन हमले के विभिन्न रूपों के लिए सज़ा में अनुशंसित परिवर्तन की सिफ़ारिशें की गयीं। यह यौन-हिंसा को रोकने के लिए आवश्यक परिवर्तनों की बहु-आयामीता की ओर अधिक समग्र समझ है।

वर्मा कमीशन ने यह भी तर्क दिया कि बलात्कार की सज़ा में पहले की तुलना में वृद्धि की जानी चाहिए। यदि पीड़िता की मृत्यु हो जाए या फिर वो निष्क्रिय स्थिति में चली जाए, तो 20 साल की सज़ा होनी चाहिए और इसे उम्रक़ैद में बढ़ाया जा सकता है; सामूहिक बलात्कार के मामले में भी सज़ा बढ़कर 20 साल होनी चाहिए जो उम्रक़ैद में बढ़ाया जा सके, बार-बार ऐसे अपराध करने वालों को भी उम्रक़ैद की सज़ा मिलनी चाहिए। वर्मा कमीशन ने दर्ज किया कि जिन विशेषज्ञों और संगठनों के साथ चर्चा हुई थी, उन्होंने तर्क दिया था कि मृत्युदण्ड को समाप्त कर दिया जाना चाहिए और इसे उम्रक़ैद के साथ बदला जाना चाहिए।[23] यह स्वीकार किया गया कि बलात्कार और यौन उत्पीड़न के अन्य रूप जघन्य अपराध थे। यह सुझाव दिया गया था कि अपराध की प्रकृति के अनुसार यौन हमले के अपराधों को वर्गीकृत किया जाना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे अन्य देशों में मृत्युदण्ड को हटाने पर हो रही बहस पर भी वर्मा कमीशन द्वारा विचार-विमर्श किया गया था। इसके अलावा, भारत में मानवाधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र आयोग के कार्य का हवाला देते हुए, यह तर्क दिया गया कि मृत्युदण्ड को आदर्श रूप से समाप्त किया जाना चाहिए। उन राज्यों में जहाँ इसे समाप्त नहीं किया गया था, मृत्युदण्ड का उपयोग प्रगतिशील रूप से प्रतिबंधित किया जाना चाहिए और जिन अपराधों के लिए इसे दिया जा रहा था, उन्हें कम किया जाना चाहिए। वर्मा कमीशन ने तर्क दिया कि 'जब क़ानून मौत के ज़रिये दण्ड देता है, तो यह अपने बुनियादी रूप को ख़तरे में डालकर क्रूरता की तरफ़ जाता है और संयम व शिष्टता के संवैधानिक प्रतिबद्धता का उल्लंघन करता है।' यह तर्क भी दिया गया था कि बलात्कार के लिए मौत की सज़ा, आवश्यक निवारक प्रभाव नहीं उत्पन्न करेगी। बलात्कार और यौन हमले की सज़ा के रूप में रासायनिक बंध्याकरण के संदर्भ में, यह तर्क दिया गया कि इस तरह की सज़ा असंवैधानिक होगी क्योंकि यह आक्रामक चिकित्सा उपचार से इनकार करने का अधिकार, गोपनीयता का अधिकार और 'क्रूर और असामान्य सज़ा के ख़िलाफ़ निषेध' का भी उल्लंघन करेगा।

मेहरा कमीशन ने राज्य के कुछ संस्थानों से जैसे संवाद किया है, उस पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। उसने कुछ राज्य निकायों जैसे पुलिस और क़ानून प्रवर्तन एजेंसियों की आलोचना करने की माँग की थी। इसका तात्पर्य यह है कि ख़ुद को लोकतांत्रिक प्रथाओं के अगुआ और न्याय

[21] वही : 340-382.

[22] आईपीसी, सी.आर.पी.सी (1951) *भारतीय साक्ष्य अधिनियम,* लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम.

[23] जस्टिस वर्मा कमेटी रिपोर्ट (2013) : 234-259.

दिलाने वाले राज्य निकायों द्वारा प्रस्तुत नियमों और मंशा को बिना किसी सवाल के स्वीकार कर लिया गया। यह माना जाता है कि पुलिस और क़ानून प्रवर्तन एजेंसियाँ यौन–हिंसा के ख़िलाफ़ कार्रवाई और लड़ाई के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध हैं। इसके आगे, दुर्भाग्य से कुछ सीमाओं के कारण वे ऐसा करने में असमर्थ हैं, लेकिन जैसे ही उन सीमाओं की गणना की जाएगी और सुधारात्मक उपाय किये जाएँगे तो सभी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इससे यौन–हिंसा में पितृसत्ता की भूमिका, राज्य अधिकारियों (पुलिस अधिकारियों सहित) की शक्ति का दुरुपयोग, राज्य निकायों और सामाजिक समूहों के हिस्से पर अनिच्छा से यथास्थिति को मूल रूप से बदलने के लिए सवाल उठाना लगभग असम्भव हो जाता है।

मेहरा कमीशन ने यह भी सिफ़ारिश की कि यौन हमले के पीड़ितों से व्यवहार में पुलिस अधिकारियों को संवेदनशील होना चाहिए। इन मुद्दों से निपटने के लिए सभी स्तरों पर पुलिस अधिकारियों को अनिवार्य प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण में शैक्षणिक पहलू के साथ–साथ सामाजिक दबाव से निपटने और पीड़ितों का समर्थन करने के लिए कौशल शामिल होना चाहिए। पुलिस अधिकारियों को सबूत इकट्ठा करने के लिए भी प्रशिक्षण की आवश्यकता थी। यह दोहराया गया था कि सभी पुलिस कार्यालयों में कम से कम एक तिहाई महिला अधिकारी हों और विशेष महिला पुलिस टीमों को बनाया जाए। रात में और दिन के दौरान पुलिस गश्त बढ़ाने के लिए प्रयास किया जाए। पीसीआर द्वारा गश्त अधिक बार और प्रभावी बनाया जाना चाहिए। पीड़िता को सही क्षेत्राधिकार वाले पुलिस स्टेशन से सम्पर्क करने के दबाव में नहीं रखा जाना चाहिए, बल्कि पुलिस को शिकायत दर्ज करनी चाहिए और ख़ुद में प्राविधिकताओं से निपटना चाहिए। एफ़आईआर अनिवार्य रूप से दर्ज होना चाहिए। सभी शिकायतों को जीरो एफ़आईआर के रूप में दर्ज किया जाना चाहिए।[24]

मेहरा कमीशन द्वारा की गयी कुछ अन्य सिफ़ारिशों में जनता की संवेदनशीलता और महिलाओं के प्रति पुलिस, सीसीटीवी कैमरे लगवाना और यौन–हिंसा को रोकने और उस पर कार्रवाई के लिए अन्य तकनीकी उपाय शामिल हैं। पुलिस को गाँवों में यौन हमले के मामलों को रोकने और कार्रवाई करने की ज़िम्मेदारी लेनी चाहिए। जैसे ही यौन उत्पीड़न की पीड़िता शिकायत दर्ज कराती है, उसका त्वरित और उचित चिकित्सा परीक्षण होना चाहिए। मेहरा कमीशन द्वारा की गयी सिफ़ारिशें अपने आप में महत्त्वपूर्ण हैं हालाँकि, वे व्यापक नहीं हैं। अनुशंसित सुधार सतह पर अधिक दिखाई देता है और कल्पना में निहित है, आमूलचूल बदलाव के बारे में नहीं है।

निष्कर्ष

मेहरा कमीशन और वर्मा कमीशन रिपोर्ट के एक–साथ अध्ययन से भारतीय राज्य के यौन–हिंसा पर प्रतिक्रिया के अंतर्निहित विरोधाभासों को समझने में मदद मिलती है। यहाँ यह तर्क दिया जा सकता है कि उत्तर औपनिवेशिक राज्य एक विषमतामूलक इकाई है न कि एकल इकाई।

ये दो रिपोर्ट एक व्यापक विषयक जैसे कि यौन–हिंसा एवं राज्य निकायों की भूमिका एवं ख़ासकर सामूहिक बलात्कार जैसे अपराध (16 दिसम्बर 2012 को दिल्ली में घटित सामूहिक बलात्कार की घटना के संदर्भ में) की बारीकियों के विश्लेषण में आधारभूत रूप से अलग–अलग हैं।

उत्तर–औपनिवेशिक लोकतांत्रिक संदर्भ में राज्य की जवाबदेही बहुत बढ़ जाती है जिसके तहत राज्य को दो संस्थागत निकायों का गठन करना पड़ता है जो सामूहिक बलात्कार से संबंधित एवं महिलाओं के प्रति हुए यौन–हिंसा से संबंधित विभिन्न पहलुओं को उजागर करे। इन दोनों निकायों ने यौन–हिंसा को समझने के दो अलग–अलग दृष्टिकोण दिये। एक तरफ़, वर्मा कमीशन ने एक प्रगतिशील

[24] जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन जाँच रिपोर्ट (2013) : 79–87.

और महिलाओं के अनुभवों से सूचित एवं नारीवादी दृष्टिकोण के अनुसार एक प्रगतिशील आवेग का प्रतीक है वहीं दूसरी और मेहरा कमीशन एक विवादास्पद आवेग प्रस्तुत करती है। मेहरा कमीशन के तहत राज्य को यौन-हिंसा को सम्बोधित करना चाहिए पर साथ ही वह यौन-हिंसा के मुद्दे को समाज को स्वच्छ बनाए रखने की आवश्यकता एवं क़ानून-व्यवस्था को बनाए रखने की आवश्यकता से जोड़ती है। मेहरा कमीशन किसी भी वृहद व्यवस्थात्मक परिवर्तन की बात नहीं करती और न ही कोई हल देती है। इन दो रिपोर्ट के दो बिल्कुल अलग एवं प्रतियोगी निष्कर्ष आते हैं जो उत्तर-औपनिवेशिक नारीवादी दृष्टिकोण की यह समझ कि राज्य एक विजातीय संस्था है को पुनर्स्थापित करते हैं। राज्य के साथ हम संलग्न हो तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि राज्य एक प्रगतिशील सम्भावनाएँ भी दे सकती है और साथ ही साथ एक स्थिर और एक रूढ़िवादी एवं पिछड़ी सम्भावना भी प्रकट करती है। अर्थात् राज्य की यौन-हिंसा के प्रति समझ एवं प्रतिक्रिया ग़ैर-रेखीय/अरैखिक और बहुआयामी है। हालाँकि, बृहत्तर मुक्ति के संघर्षों के लिए हम राज्य की उपेक्षा नहीं कर सकते क्योंकि राज्य शक्ति का एक अनिवार्य साइट है।

संदर्भ

अंगना.पी.चटर्जी और लुबना नज़ीर चौधरी (सं.) (2012), *कंटेस्टिंग नेशन : जेंडर वॉयलेंस इन साउथ एशिया : नोट्स ऑन पोस्ट कोलोनियल प्रजेंट,* जुबान पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.

अर्पिता मुखोपाध्याय (2016) 'पोस्ट-कोलोनियल फ़ेमिनिज़म ऐंड थर्ड वर्ल्ड', सुमित चक्रबर्ती (सं.) *फ़ेमिनिज़म्स, ओरिएंट ब्लैकस्वान,* नयी दिल्ली.

जस्टिस ऊषा मेहरा कमीशन ऑफ़ इनक्वायरी (2013), *रिपोर्ट ऑफ़ जस्टिस ऊषा मेहरा (रिटायर्ड) कमीशन ऑफ़ इनक्वायरी,* विज्ञान भवन, नयी दिल्ली.

जस्टिस वर्मा कमेटी (2013), *रिपोर्ट ऑन द कमेटी ऑन क्रिमिनल लॉ,* इंडियन स्टेट, नयी दिल्ली.

द इंडियन एक्सप्रेस, 31 दिसम्बर, 2012. http://epaper.indianexpress.com/78925/Indian-Express/31-December-2012#page/4/2. 6 अगस्त, 2016 को देखा गया.

द टाइम्स ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली.http://timesofindia.indiatimes.com/city/ludhiana/City-fears-for-women/articleshow/17686928.cms?. 19 जून, 2016 को देखा गया; *द टाइम्स ऑफ़ इंडिया,* 22 दिसम्बर, 2012. . http://timesofindia.indiatimes.com/city/chandigarh/Delhi-gang-rape-Outrage-spills-onto-Shimla-streets/articleshow/17715458.cms?. 7 जुलाई, 2016 को देखा गया.

निवेदिता मेनन (2004), *रिकवरिंग सबवर्जन,* परमानेंट ब्लैक, नयी दिल्ली.

निहारिका मंधाना (2012), 'इन कनवर्शेसन विथ : प्रॉसेक्यूटर गोपाल सुब्रमण्यम', द *न्युयॉर्क टाइम्स,* न्युयॉर्क. वेब पर भी उपलब्ध.

यूएसए, न्युयॉर्क. https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=2834762. 24 जनवरी, 2017 को देखा गया.

प्रतीक्षा बख़्शी (2016), 'इंप्रैक्टिकल टॉपिक्स, प्रैक्टिकल फ़ील्ड्स : नोट्स ऑन रिसर्चिंग सेक्शुअल वॉयलेंस इन इंडिया', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* अंक 51, संख्या 18.

प्रभा कोटीश्वरन (2016), *गवर्नेंस फ़ेमिनिज़म इन द पोस्ट कॉलोनी : इंडिया रेप लॉ रिफ़ॉर्म 2013,* एसएसआरएन.

रत्ना कपूर (2005), *इरॉटिक जस्टिस : लॉ ऐंड द पॉलिटिक्स ऑफ़ पोस्ट कोलोनियलिज़म,* रौटलेज, लंदन.

रीना लेविस और सारा मिल्स (2003), *फ़ेमिनिस्ट पोस्ट- कोलोनियल थियरी : अ रीडर,* रौटलेज, न्युयॉर्क.

राजेश्वरी सुंदर राजन (2003) *द स्कैंडल ऑफ़ द स्टेट : वुमन, लॉ ऐंड सिटिजनशिप इन पोस्ट— कोलोनियल इंडिया,* परमानेंट ब्लैक, नयी दिल्ली.

सारा मिल्स (2011), 'पोस्ट-कोलोनियल फ़ेमिनिस्ट थियरी', स्टेवी जैक्सन एवं जैकी जोंस (सं.) *कंटेम्पररी फ़ेमिनिस्ट थियरीज़,* रावत पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.